# इकाई 29 गजानन माधव मुक्तिबोध

## इकाई की रूपरेखा


29.0 उद्देश्य
29.1 प्रस्तावना
2 .2 जीवन परिचय और कृतित्व
29.3 युगीन पृष्ठभूमि
29,4 अन्तर्वस्तु
  29.4.1 साहित्य संबंधी विचार
  29.4.2 कविताओं में व्यक्त राजनीति
  29.4.3 सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति
  29.4.4 भीतरी और बाहरी संघर्ष का चित्रण
29.5 संरचना शिल्प
  29.5.1 काव्य रूप और शैली, प्रतीक योजना
  29.5.2 बिंब तथा आद्य बिंब, काव्य-भाषा
29.6 काव्य-पाठ एवं व्याख्या
29.7 सारांश
29.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें
29.9 बोध प्रश्नों के उत्तर


## 29.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- गजानन माधव मुक्तिबोध के जीवन परिचय एवं कृतित्व के बारे में जान सकेंगे,
- मुक्तिबोध की युगीन पृष्ठभूमि की संक्षिप्त जानकारी हासिल करेंगे,
- मुक्तिबोध के काव्य की अन्तर्वस्तु और कथ्य को समझ सकेंगे,
- मुक्तिबोध के काव्य रूप और शैली, प्रतीक योजना, बिंब तथा आद्यबिंब तथा कांव्य-भाषा के बारे में जान सकेंगे।

## 29.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व की इकाई में आपने नयी कविता के प्रमुख कवि अज्ञेय का अध्ययन किया था। इस इकाई में आप नयी कविता की प्रगतिशील धारा के कवि मुक्तिबोध्र का अध्ययन करेंगे। मुक्तिबोध को दुनियावी अर्थों में "जीने का तरीका" कभी नहीं आया। इसलिए वे कभी इस काबिल नहीं हो सके कि रोजी-रोटी का सही जुगाड़ कर पाते। पुराने प्रगतिवादी आंदोलन ने भी उन्हें नहीं स्वीकारा। कारण, वे ऐसी कविता लिख ही नहीं सकते थे जिसके कंगूरों पर लाल रूमाल या किसान-मजदूर की घोषित तस्वीरें सजी हुई हों। और उस समय प्रगतिवाद इसी घोषित नारे का शिकार हुआ पड़ा था। मुक्तिबोध गहरे अन्तर्द्वंद्व और तीव्र सामाजिक अनुभूतियों के कवि हैं ··· यह हमारे समाज का दुर्भाग्य ही है कि जीते-जी मुक्तिबोध को सम्मान, इज्जत, पहचान वो कुछ भी नहीं मिला जिसके वे हकदार थे। उन्हें पहचानने वाले लोग थे किन्तु वे सत्तासीन नहीं थे, ईमानदार थे ··· फलतः व्यक्ति की या एक साहित्यकार की पहचान के रास्ते, जो पूँजीवादी समाज में सत्ता के गलियारों, पैसों और मीडिया की चकाचौंध से होकर जाते हैं, मुक्तिबोध को न स्वीकार्य थे, न प्राप्त। जिस व्यवस्था के खिलाफ वे सीना तानकर खड़े थे, उसके चाकर वे बन भी कैसे सकते थे।

मुक्तिबोध को जानने-समझने की शुरुआत उनकी मृत्यु और पहले काव्य संग्रह "चाँद का मुँह टेढ़ा है" के प्रकाशन के बाद हुई। इस शुरुआत में बड़े-बड़े दिग्गज प्रगतिशील आलोचक भी न तो मुक्तिबोध के व्यापक गहरे सरोकारों को समझ पाए और न ही उनके काव्य का सही विश्लेषण ही हो पाया। उन पर दुरुह, रहस्यवादी, कंफ्यूज्ड, जैसे आरोप चंस्पा किए जाते रहे ··· किन्तु मुक्तिबोध का काव्य एक चुनौती की तरह सामने खड़ा रहा। आज मुक्तिबोध को समझना, उनके कांव्य में से गुजरना एक भयानक, त्रासद अनुभव है क्योंकि इस अनुभव का साक्षात्कार करने के बाद व्यक्ति पूँजीवादी व्यवस्था की बर्बरता का, उसके शोषण का और व्यक्ति की मानसिकता को कुंद करते जाने के तरीकों से नंगा साक्षात्कार करता है और यह साक्षात्कार भयानक और त्रासद ही हो सकता है।

मुक्तिबोध के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने एक ही लम्बी कविता लिखी है या उनके कथ्य में कोई विविधता नहीं है या उनकी कविताएँ पढ़ते हुए एकरसता का बोध होता है। यह बात इस रूप में सही है कि मुक्तिबोध ने अपना मोर्चा पूँजीवादी, साम्राज्यवादी शक्तियों और व्यवस्था के किले के खिलाफ बनाया था। इस किले में घुस कर इस

व्यवस्था के भीतरी संसार को उजागर करना और उसके प्रति जनता को जागरूक करने का काम अपने आप में इतना बड़ा, इतना कठिन और दुरुह था कि मुक्तिबोध इसके सिवा और दूसरा कोई शाश्वत मोर्चा संभाल ही नहीं सकते थे। कठिन, दुरुह, जटिल इस रूप में कि कविता में अपने समय के इतिहास के प्रश्नों को खोल कर रखना उपन्यास, कहानी की अपेक्षा जटिल और असंभव प्रायः होता है। और मुक्तिबोध ने इस असंभव को संभव बनाने का बीड़ा उठाया और कविता को भी हिंदी साहित्य में वो ऊँचाई दी जो उससे पहले सिर्फ निराला में मिलती है।

इस इकाई में सबसे पहले आप मुक्तिबोध के जीवन-परिचय और कृतित्व के बारे में संक्षिप्त जानकारी हासिल करेंगे। उसके बाद मुक्तिबोध को प्राप्त सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक परिस्थितियों की संक्षिप्त चर्चा की गयी है। अन्तर्वस्तु में आप मुक्तिबोध के काव्य की विशेषताओं का अध्ययन करेंगे। मुक्तिबोध ने काव्य लेखन के साथ-साथ साहित्य संबंधी सैद्धान्तिक चिंतन भी किया है। वस्तुतः मुक्तिबोध एक राजनीतिक कवि हैं — क्योंकि समाज को दिशा-निर्देश देने या उसे बनाने संवारने का सबसे बड़ा उपकरण राजनीति और राजनीतिक व्यवस्था ही होती है और मुक्तिबोध पूँजीवादी व्यवस्था के खिलाफ खड़े हो कर उसके कारनामों से हमें परिचित कराते हैं और यह भी बताते हैं कि कैसी राजनीति और राजनीतिक व्यवस्था की हमें आवश्यकता है।

संरचना शिल्प में हम मुक्तिबोध के काव्य की कतिपय संरचनात्मक विशेषताओं — काव्य रूप, शैली, प्रतीक योजना, बिंब और काव्य भाषा का विश्लेषण करेंगे। अंत में काव्य पाठ और व्याख्या में आप मुक्तिबोध की दो कविताओं के दो अंशों का पाठ करेंगे और उनकी व्याख्या करना भी सीखेंगे। आइए मुक्तिबोध के जीवन परिचय की जानकारी हासिल करें।

## 29.2 जीवन परिचय और कृतित्व

गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म 13 नवम्बर, 1917 को श्योपुर, जिला मुरैना में हुआ था। इनके पिता माधवराव पुलिस में इंस्पेक्टर थे। माँ पार्वती पढ़ी-लिखी, भावुक और खुद्दार महिला थीं। महाराष्ट्रीय होने के कारण मुक्तिबोध की मातृभाषा मराठी थी किंतु उन्होंने हिंदी में लिखा। इनके भाई शरच्चंद्र माधव मुक्तिबोध मराठी के महत्वपूर्ण कवि हैं।

मुक्तिबोध के पिता उज्जैन में थानेदार थे। यहीं मुक्तिबोध की पढ़ाई हुई। उनके सहपाठी शांताराम को कुछ दिनों के बाद गश्त लगाने की नौकरी मिल गयी और मुक्तिबोध को उसके साथ रात भर गश्त देने में मज़ा आने लगा। रहस्य, चुप्पी और अनाम आतंक का वातावरण जो उनकी कविताओं में है, इन्हीं रात्रिकालीन मटरगश्तियों का रूपांतरण है।

मुक्तिबोध के पिता उन्हें वकील बनाना चाहते थे, किन्तु मुक्तिबोध की रुचि स्वतंत्रता संग्राम में और उससे उत्पन्न राजनीतिक स्थितियों में थी। जल्द ही वे माखनलाल चुतर्वेदी और वीरेन्द्र कुमार जैन, रमाशंकर शुक्ल जैसे कवियों के संपर्क में आ गये और साहित्यिक, दार्शनिक प्रश्नों से उलझने लगे। मार्क्स से फ्रायड और गांधी से दॉस्तायवस्की उनकी रुचि के विषय बन गये। धीरे-धीरे उनमें अपनी जनता के प्रति गहरी सहानुभूति और सामाजिक बदलाव की आकांक्षा पैदा होने लगी। इस समय वे 21 वर्ष के थे। इसी वर्ष मुक्तिबोध ने परिवार के विरोध के बावजूद प्रेम विवाह किया और सदियों के मानसिक बंधन तोड़ डाले। उसी वक्त उन्हें साधारण सी अध्यापक की नौकरी मिल गयी। इसी वर्ष प्रभाकर माचवे उज्जैन में दर्शनशास्त्र के प्राध्यापक हो कर आए, दोनों में गहरी मित्रता हो गयी। 1941 में माचवे जी की सहायता से मुक्तिबोध शारदा शिक्षा सदन में आये, जहाँ नेमिचन्द्र जैन, माचवे जी की ही वजह से पहले ही आ चुके थे।

मुक्तिबोध और नेमिचन्द्र जैन की दोस्ती हिंदी कविता के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसी दोस्ती की वजह से "तार सप्तक" (1943) का प्रकाशन संभव हुआ जिसमें सात युवा कवि संकलित थे। सम्पादक थे — अज्ञेय। इन्हीं कवियों ने कविता को एक नया मोड़ दिया, जिसे नयी कविता कहा जाता है।

बाद में नेमिचन्द्र कलकत्ता चले गये और मुक्तिबोध 'हंस' में काम करने बनारस। लेकिन वहाँ बिताए दो वर्ष उनके लिए प्रसन्नता के नहीं थे। उबाऊ और थका देने वाले काम के अलावा वे मध्य भारत के खुले आकाश के लिए तरसते थे इसलिए 1947 में हितकारिणी हाई स्कूल में पढ़ाने के लिए वे जबलपुर वापिस आ गए। सन् 1947 से 1964 में चेतनाहीन होने तक मुक्तिबोध मध्य प्रान्त में ही रहे। उन्होंने अपने जीवन में लगातार नौकरियाँ बदलीं। कभी प्रेस में प्रूफ रीडरी की, कभी आकाशवाणी से प्रसारण, कभी अखबार के संवाद्दाता बने और कभी साहित्यिक-मासिक का संपादन किया। अर्थात् आर्थिक रूप से वे हमेशा तंगहाली में ही रहे। सिर्फ जीवन के अंतिम वर्षों में 1959 में उन्हें राजनांद गाँव में व्याख्याता की नौकरी मिली, जब वे तुलनात्मक रूप से शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत कर पाने की कोशिश कर रहे थे लेकिन अस्वस्थ हो गये। स्थानीय चिकित्सा प्रभावकारी न होने पर उन्हें भोपाल लाया गया जहाँ लकवे ने उन पर आक्रमण कर दिया। कुछ हिंदी लेखकों के प्रयासों से तत्कालीन प्रधानमंत्री ने दिल्ली में उनकी चिकित्सा की व्यवस्था करायी, लेकिन वे अधिक दिन तक जीवित नहीं रह सके। 11 सितंबर, 1964 को अस्पताल में ही उनकी मृत्यु हो गयी।

मुक्तिबोध का जीवन विभिन्न स्तरों पर लगातार संघर्ष का जीवन रहा है। मार्क्सवादी विचारधारा और सामाजिक बदलाव के आंदोलन के प्रति उनकी प्रतिबद्धता ने उन्हें किसी ऐसी नौकरी से नहीं जुड़ने दिया, जहाँ अच्छा वेतन मिलता और उनकी आर्थिक तंगी दूर होती। अपनी निर्धनता से लड़ने और स्थितियों को बेहतर बनाने की उन्होंने कई कोशिशें कीं

लेकिन उनका आदर्शवाद और प्रतिबद्धता हमेशा आड़े आए। एक पत्र में नेमिचन्द्र जैन को उन्होंने लिखा था कि बिना पी-एच.डी. के उन्हें किसी कालिज में काम नहीं मिल सकता। वे केवल हिंदी के द्वितीय श्रेणी के एम.ए. थे।

जीवन के अंतिम काल में एक बार भाग्य ने उनका साथ दिया। एक छोटे प्रकाशक ने भारतीय इतिहास पर एक पाठ्य-पुस्तक तैयार करने के लिए उनसे संपर्क किया। मुक्तिबोध तैयार हो गये और अपनी मार्क्सवादी समझ के अनुसार उन्होंने एक पुस्तक तैयार कर दी। चयनकर्त्ता अक्सर पुस्तकें पढ़ कर स्वीकार नहीं करते, अतः यह पुस्तक भी स्वीकृत हो गयी। मुक्तिबोध को रॉयल्टी मिलने की आशा बँधी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। पुस्तक के कुछ अंशों को लेकर कठमुल्लों ने अखबारों में बावेला खड़ा कर दिया ··· पुस्तक पाठ्यक्रम से निकाल दी गयी। इससे मुक्तिबोध में असुरक्षा और भय की भावना घर कर गयी। इस निजी क्षति से उन्हें बहुत बड़ा धक्का पहुँचा। उनकी "अंधेरे में" कविता का परिप्रेक्ष्य यही समय है।

### कृतित्व

मुक्तिबोध मूलतः कवि हैं किन्तु कविता के साथ-साथ अथवा अपनी कविता को और प्रखर बनाने के लिये उन्होंने कहानी, उपन्यास, आलोचना भी लिखी है।

### काव्य संग्रह

- चाँद का मुँह टेढ़ा है (1964)
- भूरी-भूरी खाक धूल (1980)

### कथा साहित्य

- काठ का सपना
- विपात्र
- सतह से उठता हुआ आदमी

### आलोचनात्मक पुस्तकें

- कामायनी : एक पुनर्विचार
- नयी कविता का आत्मसंघर्ष
- नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र
- समीक्षा की समस्याएँ
- एक साहित्यिक की डायरी
- भारत : इतिहास और संस्कृति

## 29.3 युगीन पृष्ठभूमि

मुक्तिबोध के साहित्य और उनके व्यक्तित्व के निर्माण में उनके युग की राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक परिस्थितियों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। आइए, उस युग की परिस्थितियों या पृष्ठभूमि का आकलन करें।

**राजनीतिक पृष्ठभूमि :** मुक्तिबोध ने जब लिखना शुरू किया था, यह समय देश में स्वतंत्रता आंदोलन का समय था। दूसरा विश्व युद्ध, उसमें भारत की शिरकत, भारत छोड़ो आंदोलन, फिर देश के बंटवारे के साथ देश का आजाद होना आदि स्वतंत्रतापूर्व की महत्वपूर्ण राजनीतिक घटनाएँ थीं, इसके बाद कांग्रेसी नेताओं ने सत्ता संभाली, नेहरू युग का प्रारंभ हुआ, नेहरू जी ने समाजवाद लाने के अपने वायदे को दोहराया। देश के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ प्रारंभ हुईं, किन्तु जल्दी ही देश की जनता का अपने सत्ताधारियों से मोह भंग हो गया। वास्तव में जो आजादी हमें मिली, उस समय की परिस्थितियों में चाहें वो ठीक भी, किन्तु बाद की परिस्थितियों ने यही साबित किया कि हमें सिर्फ राजनीतिक आजादी प्राप्त हुई है, वास्तविक आज़ादी नहीं। क्योंकि देश की आम जनता की जो दारुण दशा अंग्रेजी काल में थी, कांग्रेसी युग में उसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। जाति प्रथा, भ्रष्टाचार और गरीबों का शोषण, अनपढ़ता जैसी बीमारियों को दूर करने का कोई इलाज किसी के पास नहीं था। फलतः राजनीतिज्ञों पर से जनता का विश्वास डिगने लगा। दूसरे विश्व युद्ध के बाद विश्व दो प्रमुख खेमों — समाजवादी और साम्राज्यवादी में बंट गया। और शीत युद्ध का दौर शुरू हुआ। साम्राज्यवादी शक्तियों का पुरोधा अमरीका था ··· उसने नव-स्वाधीन और आजादी के लिए संघर्ष कर रहे देशों में अपना प्रभुत्व स्थापित करने और वहाँ क्रांति की परिस्थितियों को खत्म करने के प्रयास जोरो-शोरों से शुरू कर दिये। फासिज्म, साम्राज्यवादी शक्तियों और पूँजीवादी शक्तियों के गठजोड़ न सिर्फ राजनीतिक रूप से सक्रिय हुए बल्कि इन्होंने भाषा, संस्कृति, धर्म जैसे नाजुक और किसी भी समाज के आधारभूत स्तंभों के जरिये अंध विश्वास, भ्रष्टाचार और अलगाववाद फैलाना शुरू कर दिया। यह सारे काम साम्राज्यवाद पैसा, हथियार और किसी भी देश में सांस्कृतिक, साहित्यिक, धार्मिक स्तर पर घुसपैठ करके करता है। भारत भी इसका अपवाद नहीं रहा। फासिज्म शक्तियाँ यहाँ भी सक्रिय थीं। और जनवादी शक्तियाँ कमजोर पड़ रही थीं। कम्युनिस्ट पार्टियों के आपसी झगड़े और कच्ची समझ ने जनवादी आंदोलन को आजादी के बाद मजबूत करने की बजाए कमजोर ही किया।

**सामाजिक और साहित्यिक पृष्ठभूमि :** आजादी से पूर्व जनता को विश्वास था कि यदि देश आजाद हुआ तो एक ऐसे समाज की रचना हमारे नेता करेंगे जिसमें रोटी-कपड़ा-मकान सबको मुहैय्या करवाया जाएगा, जाति, भाषा, रंग के

आधार पर किसी से कोई भेदभाव नहीं होगा। किन्तु यह सब आदर्श थे, यथार्थ तो यह था कि राष्ट्रीय आंदोलन के लगभग सभी नेता जिस वर्ग से आए थे, वो समाज का खाता-पीता वर्ग था ··· यह स्वाभाविक था कि वो समाज के उस वर्ग के और पूँजीपति वर्ग के हितों की सुरक्षा करें। आजादी के बाद की सामाजिक संरचना को यदि आप देखें तो आपको वर्गविभाजित समाज में एक ओर किसानों और मजदूरों की सामंती शोषण के तले पिसती हुई जाति मिलेगी, एक नया नौकरी पेशा मध्यम वर्ग मिलेगा और एक नव धनाढ्य और नेताओं का वर्ग मिलेगा। मतलब यह कि आजादी मिलने पर हमारी सामाजिक संरचना में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं हुआ। शोषण बरकरार रहा। आजादी के दस वर्षों में ही लोगों का अपने नेताओं से मोहभंग हो गया। भ्रष्टाचार, शोषण, मूल्य विघटन की प्रक्रिया शुरू हो गयी। यही वह सामाजिक परिदृश्य था जो नयी कविता के कवियों और मुक्तिबोध को मिला।

आप छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद और नयी कविता के विषय में अध्ययन कर चुके हैं। मुक्तिबोध ने जब लिखना शुरू किया था तब छायावाद का युग समाप्त हो चुका था और प्रगतिवादी कवियों की विषयवस्तु पर अधिक से अधिक बल देती हुई प्रचारात्मक कविताएँ फूट रही थीं। बहुत से कवि इस प्रचार और कविता के सतहीपन से संतुष्ट नहीं थे। मुक्तिबोध उनमें से एक थे। वे अपना रास्ता स्वयं तलाश कर रहे थे। उनकी कविताएँ जटिल, संकुल प्रतीत होती थीं। ''तारसप्तक'' के कवियों में से वे एक थे।

''प्रयोगवाद'', ''तारसप्तक'' के सात कवियों की रचनाओं को आधार बनाकर ही चला और ''नयी कविता'' में रूपांतरित हो गया। वस्तुतः ''तारसप्तक'' में ही दो काव्यधाराएँ अपने बीज रूप में स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं। एक धारा है अज्ञेय की जो व्यक्ति और समाज में व्यक्ति को, कला, रूप और कला-विषय में कला रूप को, क्षण की अनुभूति को प्राथमिक मानती है और दूसरी धारा है मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, रामविलास शर्मा, शमशेर और रघुवीर सहाय की जो व्यक्ति और समाज को, विषय और रूप को द्वंद्वात्मक रूप में देखती है। इस प्रकार नयी कविता के प्रमुख कवि होते हुए भी मुक्तिबोध प्रगतिशील काव्य की उस धारा का प्रतिनिधित्व करते हैं जो काव्य को सीधे-सीधे आम जनता के सुख-दुख, शोषण की अभिव्यक्ति नहीं मानते अपितु उनके सुख-दुख, शोषण की जड़ों को तलाशने का वृहत्त कार्य करते हैं। मुक्तिबोध सत्य को एक स्तरीय नहीं मानते, न वो एक स्तरीय होता है — इसलिए उनकी कविता भी जटिल और लंबी होती गयी हैं। इस बात की हम आगे चर्चा करेंगे। यहाँ हम इसी बात की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं कि मुक्तिबोध को जो साहित्यिक पृष्ठभूमि मिली, उसमें सभी कवि प्रचलित काव्य-धाराओं से संतुष्ट न होकर अपना-अपना रास्ता तलाश कर रहे थे।

## 29.4 अन्तर्वस्तु

मुक्तिबोध के काव्य की अंतर्वस्तु जितनी व्यापक है, उससे ज्यादा गहरी है। अपनी रचनाओं के माध्यम से वे समाज, जीवन और युग के जिस यथार्थ का साक्षात्कार करते हैं और जिसे अभिव्यक्त करते हैं, वह वस्तुतः जटिल, संकुल और इतना उलझा हुआ और षडयंत्रों से पटा हुआ है कि उसे सीधे-सीधे पकड़ पाना या अभिव्यक्त कर पाना मुक्तिबोध के लिए स्वभावतः ही संभव नहीं था। उनकी अन्तर्वस्तु में राजनीति की उलझी हुई, पेंचदार बाजियों, नेताओं के भ्रष्टाचार और इसकी जड़ें, समाज में रह रहे मध्यवर्गीय, बुद्धिजीवी व्यक्ति के मन के बाह्य और भीतरी संघर्ष, निरंतर विघटित होते मूल्यों के बीच में, जिंदा रहने की छटपटाहट में फंसे हुए जन तथा इसके साथ ही साहित्य, साहित्य से जुड़े हुए तमाम-तमाम सवाल भी हैं।

मुक्तिबोध ने साहित्य संबधी सैद्धांतिक निबंधों द्वारा अपने जागरूक रचनाकार के प्रखर और संवेदनशील चिंतन को प्रस्तुत किया है। एक रचनाकार की रचना-प्रक्रिया क्या और कैसी होती है, उसे किन-किन कठिनाईयों, उलझनों का सामना करना पड़ता है, एक रचना में वस्तु एवं रूप का क्या संबंध होता है, साहित्यकार का समाज से क्या रिश्ता होता है, सामाजिक विकास में साहित्य की क्या भूमिका होती है, जनता का साहित्य किसे कहते हैं — इस तरह के सवालों से मुक्तिबोध अपने निबंधों में साक्षात्कार करते हैं।

आइए, उनके काव्य की अन्तर्वस्तु को विस्तार से देखें।

### 29.4.1 साहित्य संबंधी विचार

मुक्तिबोध ने अपने निबंधों में साहित्य संबधी विचार प्रकट किए हैं। मुक्तिबोध के काव्य को समझने के लिये आवश्यक है कि साहित्य के प्रति उनकी क्या धारणाएँ हैं, उन्हें समझ लिया जाए।

''जनता का साहित्य'' किसे कहते हैं। शीर्षक लेख में मुक्तिबोध यह बताते हैं कि जनता का साहित्य क्या है? यह सवाल यहाँ इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि मार्क्सवादी और प्रगतिशील कवियों से अमूमन यह अपेक्षा की जाती है कि उनकी रचनाएँ या कविताएँ भाषा और शैली की दृष्टि से इतनी सरल हों कि वे आम जनता की समझ में आ जाएं। मुक्तिबोध मार्क्सवादी भी हैं और समझने के स्तर पर दुर्बोध भी। किन्तु यह विरोधाभास नहीं है। मुक्तिबोध का साहित्य जनता का साहित्य है, उसी प्रकार जैसे दास कैपिटल (मार्क्स) भी जनता का साहित्य है। अर्थात् जो साहित्य ''जनता के जीवन मूल्यों को, जनता के जीवनादर्शों को प्रतिष्ठापित करता हो, उसे अपने मुक्तिपथ पर अग्रसर करता हो — जनता का साहित्य है।'' साहित्य में सांस्कृतिक भाव होते हैं, सांस्कृतिक भावों को ग्रहण करने के लिये बुलंदी, बारीकी

और जटिलताओं को पहचानने के लिये पाठक को शिक्षित होना चाहिए, सुसंस्कृत होना चाहिए। साहित्य का उद्देश्य है — सांस्कृतिक और मानसिक परिष्कार। किन्तु यह परिष्कार तभी संभव है जब जनता इतनी शिक्षित हो कि उसे पढ़ सके, समझ सके। अतः जनता का साहित्य वो होता है जो जनता के लिये हो। अतः जनता का साहित्य वह नहीं होता जिसे जनता तुरंत समझ ले, वो भी होता है, जिसे वो अपनी अशिक्षित दशा के कारण समझ तो नहीं पाती, किन्तु यह उसी की भलाई के लिये कार्य करता है।

मुक्तिबोध ने रचना प्रक्रिया पर भी गहराई से विचार किया है। उनका मानना है कि प्रत्येक रचनाकार की अपनी-अपनी रचना-प्रक्रिया होती है, प्रत्येक विधा की रचना प्रक्रिया भिन्न होती है, किन्तु बुद्धि, भावना, कल्पना और माध्यम (शब्द, भाषा, चित्र आदि) एक समान यही तत्व होते हैं। मुक्तिबोध ने रचना-प्रक्रिया की चर्चा करते हुए इसके तीन क्षण माने हैं। कला का पहला क्षण है जीवन का उत्कट तीव्र अनुभव क्षण। दूसरा क्षण है इस अनुभव का अपने कसते-दुखते हुए मूलों से पृथक हो जाना और एक फैंटेसी का रूप धारण कर लेना मानो वो फैंटेसी अपनी आँखों के सामने खड़ी हो। तीसरा और अंतिम क्षण है, इस फैंटेसी के शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया का आरंभिक क्षण और उस प्रक्रिया की परिपूर्णावस्था तक की गतिमानता।

मुक्तिबोध ने वस्तु एवं रूप पर भी विचार किया है। वे वस्तु को रूप से या रूप को वस्तु से अलग नहीं मानते। वस्तु जैसी होगी, जैसा विषय होगा, उसके रूप का निर्धारण वह वस्तु ही करेगी — या इन दोनों में द्वंद्वात्मक संबंध है।

मुक्तिबोध ने लगभग लंबी कविताएँ लिखी हैं। इसके बारे में उनका कहना है कि यथार्थ जो होता है, वो गतिशील होता है, उसके तत्व परस्पर गुंफित होते हैं। गतिशील यथार्थ को अभिव्यक्त करने में रचना भी लंबी से लंबी होती चली जाती है। मुक्तिबोध का मत है कि यह युग आवेगों या भावनाओं को अभिव्यक्ति देकर छुटकारा पाने का युग नहीं है बल्कि संवेदनात्मक ज्ञान को ज्ञानात्मक संवेदना से जोड़कर अभिव्यक्त करने का है। ऐसे में कोई भी अनुभव संवेदना के धरातल पर उद्वेलित होकर अभिव्यक्त नहीं होता बल्कि वह ज्ञान से जुड़ता है, विचारों से जुड़ता है और संपूर्ण जीवन-जगत से जुड़ता है — ऐसा अनुभव चाहे कितना ही आवेग भरा हो, वह विचार में परिवर्तित होगा ही। इसलिए मुक्तिबोध की कविताएँ वैचारिक कविताएँ हैं, लम्बी कविताएँ हैं।

### 29.4.2 कविताओं में व्यक्त राजनीति

मुक्तिबोध व्यापक अर्थों में राजनीतिक कवि हैं। किन्तु उनका उद्देश्य राजनीति पर व्यंग्य, कटाक्ष करने का या राजनीतिक परिदृश्य को अभिव्यक्ति देने का नहीं रहा है। बल्कि मुक्तिबोध ने राजनीति और राजनीतिक व्यवस्था के आतंक, भय, भ्रष्टाचार, रहस्य और जन-जीवन को समाप्त करती जा रही राजनीतिक संस्कृति के किले में घुस कर उसे नंगा करने का प्रयत्न किया है। राजनीति और व्यवस्था और इनका यथार्थ इतना सरल नहीं होता, जितना हम मान लेते हैं। इस यथार्थ की सही पहचान और पकड़ के लिये मुक्तिबोध को जो कलात्मक रास्ता अपनाना पड़ा, वो भी उतना ही जटिल, प्रतीक और बिंबों में उलझा हुआ जान पड़ता है। किंतु एक बार इनकी तह में जाने पर सब कुछ साफ-साफ दिखाई पड़ने लगता है।

मुक्तिबोध की राजनीतिक समझ बहुत साफ और दृढ़ है। वे मार्क्सवादी विचारधारा के प्रतिबद्ध कवि हैं। वे मानते हैं कि समाज और मानव का उद्धार तब तक नहीं हो सकता जब तक कि शोषण और आतंक में पिसती हुई जनता पूँजीवादी और साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध एकजुट होकर क्रांति के लिये तैयार न हो जाए। मुक्तिबोध यह भी मानते हैं कि इस वर्ग विभाजित समाज में बुद्धिजीवी वर्ग का कर्तव्य, इस जन शक्ति को क्रांति के दिपदिपाते विचारों से लैस करने का है। और जनता को उसके शोषण, शोषण के हथियारों से वाकिफ करवा कर उसमें चेतना जगाने का है। इसलिए अपनी कविताओं में वे बार-बार अपनी प्रतिबद्धता इस जनता के पक्ष में रखते हैं — उसे सुविधाभोगी, भ्रष्टाचारी वर्ग से आगाह करते हैं, उनमें आत्मविश्वास जगाते हैं। मुक्तिबोध की एक कविता है — "गुंथे तुमसे, बिंधे तुमसे"।

"वेदना में हम विचारों की
गुंथे तुमसे
बिंधे तुमसे
व आवेष्टित परस्पर हो गये
× × ×
कोई नहीं थे हम तुम्हारे किंतु
सहचर हो गये
चाहे जलधि, पर्वत, हजारों मील की दूरी
हमारे बीच में आ जाए
फिर भी मानसिक अदृश्य सूत्रों से
हमारी आत्माएँ परस्पर बात करती हैं"

(मुक्तिबोध रचनावली, भाग-दो, पृ. 27)

यह जो "तुम" है, जिससे कवि विचारों की वेदना में गुंथने-बंधने की बात कर रहा है, यह आम, कर्मशील, जनता ही है — विचारों की वेदना या चिंतन में कवि ने यही पाया है कि यदि समाज में किसी के साथ होना है, यदि समाज का उद्धार करना है तो इसी शोषित पीड़ित, अशिक्षित जन के प्रति प्रतिबद्ध होना पड़ेगा।

द्वितीय विश्वयुद्ध में पूँजीवादी साम्राज्यवादी शक्तियों ने आतंक, मौत, भय का जो खेल खेला, सारे विश्व को, धरती को युद्ध की आग में झोंक कर जो तमाशायी बने, उसका वर्णन मुक्तिबोध ने "जमाने का चेहरा" कविता में किया है —

"साम्राज्यवादियों के बदशक्ल चेहरे
एटमिक धुएँ के बादलों से गहरे
क्षितिज पर छाए हैं,
जापान को ध्वस्त कर
ईरान को मार कर
ईजिप्त के खात्मे के लिये हैं उतावले
अरब के खात्मे के लिये हैं बावले ।।

साम्राज्यवादी शक्तियाँ भारत में भी सक्रिय हैं — यहाँ भी वे अपने पाँव पसार रही हैं —

साम्राज्यवादियों के
पैसों की संस्कृति
भारतीय आकृति में बंध कर
दिल्ली को
वाशिंगटन व लंदन का उपनगर
बनाने पर तुली हैं ।।
भारतीय धनतंत्री
जनतन्त्री बुद्धिजीवी
स्वेच्छा से उसी का ही कुली है ।।

मुक्तिबोध सीधे-सीधे पूँजीवादी संस्कृति, सभ्यता और राजनीति का भी विश्लेषण करते हैं, इसके द्वारा मानव जाति पर जो अत्याचार किये जाते हैं, जिस आतंक, भय से व्यक्ति के जीवन, उस के सोचने की शक्ति पर प्रहार किये जाते हैं, और जिसके बारे में वे सचेत नहीं रह पाता, उसका चित्रण भी मुक्तिबोध ने किया है। छायावाद का चमकीला, प्रेमिका के मुखड़े जैसा सुंदर चाँद मुक्तिबोध के यहाँ आकर पूँजीवाद का प्रतीक बन जाता हैं। सौन्दर्यबोध का यह दूसरा छोर है। एक छोर तो सौन्दर्यबोध का वह होता है जहाँ सुंदर, कमनीय, लावण्य; कोमलता और आनंद है और दूसरा छोर वह है, जहाँ भय, आतंक, पीड़ा, त्रासदी और किमाकार है। मुक्तिबोध सौंदर्यबोध के इसी दूसरे किन्तु यथार्थ छोर पर खड़े दिखाई देते हैं।

मीनारों के बीचों बीच चाँद का है टेढ़ा मुँह
लटका,
मेरे दिल में खटका —
कहीं कोई चीख, कहीं बहुत बुरा हाल रे ।।
अजीब है ।।
गगन में करफ्यू
धरती पर चुपचाप जहरीली छीः थूः
पीपल के सुनसान घोंसलों में पैठे हैं
कारतूस छर्रे
जिससे कि हवेली में
हवाओं के पल्लू भी सिहरे ।
गंजे सिर चाँद की संवलाई किरनों के जासूस
साम-सूम नगर में धीरे-धीरे घूम-घाम
नगर के तिकोनों में छुपे हुए
करते हैं महसूस
गलियों की हाय-हाय ।।
चाँद की कनखियों की किरनों ने
नगर छान डाला है।
अंधेरे को आड़े-तिरछे काट कर
पीली-पीली पट्टियाँ बिछा दीं
समय काला-काला है।

यह "चाँद का मुँह टेढ़ा है" कविता में से जो उद्धरण हमने ऊपर दिया है — इसे पढ़ कर आप इस बात का अंदाज लगा पाएंगे कि कवि कितनी भयाकुल, आतंक पैदा करने वाली और त्रासद स्थिति का चित्रण कर रहा है। सुनसान घोंसले, चुपचाप जहरीली छीः थूः कारतूस, छर्रे, हवेली, हवाओं के पल्लू, पीली-पीली पट्टियाँ, काला-काला समय — एक ऐसे भयानक और वीरान वातावरण का निर्माण करते हैं, जिससे कविता एक स्तर पर इसी भयानकता

की सृष्टि करती जान पड़ती है। लेकिन कवि का उद्देश्य डराना नहीं बल्कि उस आतंक, भय से परिचित कराना है, जो पूँजीवादी राजनीति और संस्कृति के कारण पनपता है, जो मनुष्य के मूलभूत विश्वासों और मूलभावों पर प्रहार करके उन्हें तोड़ता है, जो मनुष्य को जड़ मशीन में बदलने लगता है। इसके बाद मुक्तिबोध अपनी कविताओं में इस व्यवस्था से छुटकारा पाने, इस जहर को समाप्त करने के लिये, इसके प्रति जागरूक होने के लिये जनशक्ति से वैचारिक, भौतिक और संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ने का आह्वान भी करते हैं।

### 29.4.3 सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति

मुक्तिबोध की कविताओं में तत्कालीन सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति विभिन्न रूपों में हुई है। इतना तो आप जान ही गये होंगे कि मुक्तिबोध के लिये यथार्थ या सामाजिक यथार्थ एक घटना मात्र नहीं होता बल्कि वो सम्पूर्ण जीवन में गुंथा हुआ ऐसा यथार्थ होता है जिसके कई सिरे होते हैं और जिसकी जड़ें दूर गहरे तक जीवन के कई-कई संदर्भों में धंसी हुई होती हैं। इस यथार्थ को मुक्तिबोध गतिशील यथार्थ कहते हैं जिसकी कलात्मक अभिव्यक्ति के लिये वे फैंटेसी का इस्तेमाल करते हैं, फलतः उनकी कविताएँ दीर्घ होती जाती हैं।

मुक्तिबोध सुविधाभोगी जमात के लोगों की झूठी उपलब्धियों को रेखांकित करने के बहाने इस वर्ग के लोगों की असलियत को नंगा करते हैं। वे यह बताते हैं ये लोग वस्तुतः अवसरवादी, झूठे, स्वार्थी और जनता के उतने ही दुश्मन हैं, जितने वे लोग जो सत्ता हाथ में ले कर जनता का शोषण करते हैं। मुक्तिबोध की एक कविता है "भाग गयी जीप"। इसमें वे बताते हैं कि बस (सुविधाओं की) छूट जाती है और कुछ लोग इसमें चढ़ जाते हैं। इसमें चढ़ने वाले आज के अवसरवादी सुविधाभोगी लोग हैं जो "बस में ही ठुंस जाने को जिन्दगी की जीत" मानते हैं। मुक्तिबोध लिखते हैं —

तुममें कुछ
अच्छाई ही शेष थी
इसीलिए घबरा गये
पकड़ न सके बस
और वह छूट गयी
पीछे रह गये तुम ॥
× ×
बस मिस हो गयी
कर गये मिस तुम
बहुत अच्छा हुआ यह
प्राणों में हमारे
समासीन पूर्ण तुम
समय के मारे तुम
केवल हमारे हो
केवल हमारे हो ॥

(मुक्तिबोध रचनावली, खंड-दो, पृ. 133)

मुक्तिबोध यहाँ सुविधाभोगी, अवसरवादी लोगों के समकक्ष अपना पक्ष भी स्पष्ट करते हैं, वे इन लोगों में शामिल हो कर अपने वर्ग से अलग नहीं होना चाहते। "कहने दो उन्हें जो कहते हैं" शीर्षक कविता में मुक्तिबोध इस तथाकथित सफलतावादी, सुविधाभोगी वर्ग के लोगों का घटियापन और कमीनापन उघाड़ते हुए बताते हैं कि ये लोग अपने ही (मध्यम वर्ग) वर्ग के होते हुए भी उस मरणशील व्यवस्था का साथ देते हैं जो शोषण, भ्रष्टाचार और मूल्यहीनता की बुनियाद पर टिकी है। सफलता, भद्रता, कीर्ति और यश की यह रेशम की पूनों की चाँदनी —

सूखे हुए कुओं पर झुके हुए झाड़ों में
बैठे हुए घुग्घुओं व चमगादड़ों के हित
जंगल के सियारों और
घनी-घनी छायाओं छिपे हुए
भूतों और प्रेतों तथा
पिशाचों और बेतालों के लिये ही —
मनुष्य के लिए नहीं — फैली यह
× × ×

ये सुविधापरस्त लोग जो सुविधाएँ और सफलता के सिक्के बटोरने के लिए घुग्घु, सियार, पिशाच और बेताल बन जाते हैं। मुक्तिबोध उन्हें ललकारते हैं और स्वयं को उनसे अलग करते हैं —

सामाजिक महत्व की
गिलौरियाँ खाते हुए
असत्य की कुर्सी पर
आराम से बैठे हुए

मनुष्य की त्वचाओं का पहने हुए ओवरकोट,
बंदरों व रीछों के सामने
नयी-नयी अदाओं से नाच कर
झुठाई की तालियाँ देने से, लेने से
सफलता के ताले ये खुलते हैं
× × ×
जवाब यह मेरा है
जा कर उन्हें कह दो कि सफलता के जंग-खाये
तालों और कुंजियों
की दुकान है कबाड़ी की।

मुक्तिबोध की एक और कविता है "एक रग का राग"। इसमें वे बताते हैं कि आज के युग में तो बुराईयों, भ्रष्टाचार, झूठ, बेईमानी, धोखाधड़ी इस व्यवस्था के कारण रेत के कणों सी समाज में फैल गयी हैं और वे केवल व्यंग्य का विषय है, और उसके लिये तर्क दिया जाता है कि यह तो अंग रूप है, हमारे जीवन का अटूट हिस्सा है —

पूर्व युगों में भी खूब बुराइयाँ रही आयीं
किंतु, वे भीमाकार शक्ति रूप
दिखलायी जाती थीं,
रावण व कुम्भकर्ण, शैतान
उनका ही रूप था।
उनसे डरा जाता था, उनसे लड़ा जाता था।
× × ×
किंतु उसी अमंगल को आज सिर्फ
सहा जाता हास कह
आज वह मात्र व्यंग्य रूप है
तर्क यह —
हाय! यह सबका अंग रूप है।

## 29.4.4 भीतरी और बाहरी संघर्ष का चित्रण

मुक्तिबोध गहन मानसिक अन्तर्द्वंद्वों और तीखे सामाजिक अनुभवों के कवि हैं। मुक्तिबोध की कविताओं में जिन शब्दों का बहुत इस्तेमाल हुआ है उनमें से एक शब्द है — "अंधेरा", इसी से मिलते-जुलते और शब्द भी हैं — स्याह, काला, श्याम, साँवला, रात, तम-अंतराल, तिमिर आदि। यहाँ तक कि कुछ प्रसिद्ध फूलों को भी कवि इसी रंग में देखता है —

काले गुलाब व स्याह सिवन्ती
स्याह चमेली
सँवलाये कमल

यह अंधेरा क्या है? कवि इससे इतना घिरा हुआ क्यों है? वास्तव में यह अंधेरा मन का और मन को बनाने वाली बाह्य परिस्थितियों का है। भीतर और बाहर के इसी अंधेरे में मुक्तिबोध अपने आत्मरूप की, आत्माभिव्यक्ति की खोज करते हैं। डायरी में कवि लिखता है —

"मुझे लगता है, मन एक रहस्यमय लोक है। उसमें अंधेरा है। अंधेरे में सीढ़ियाँ हैं। सीढ़ियाँ गीली हैं। सबसे निचली सीढ़ी पानी में डूबी हुई है। वहाँ अथाह काला जल है। उस अथाह जल से स्वयं को ही डर लगता है। इस अथाह काले जल में कोई बैठा है — वह शायद मैं ही हूँ।" मैं का यह रहस्यमय लोक मुक्तिबोध की कविताओं में बार-बार आता है। गड्ढ़ा, बावड़ी, तालाब, तिलिस्मी खोह, तह आदि जैसे प्रयोग मन के इसी रहस्यमय लोक की ओर ले जाते हैं —

चला जा रहा हूँ
सूखे हुए झरने की पथरीली गली में
भयानक गुफाओं में घुसता हूँ काँप कर
मन मार
उतरता हूँ गड्ढ़ों में, खोहों के तले में।

मन के भीतर इन अंधेरों में आत्मा का सत्य छिपा बैठा है जो सौ-सौ पहरों में बंधा हुआ है। ये पहरे मनुष्य की आत्मा पर सदियों में इस शोषणवादी — सामंती, पूँजीवादी व्यवस्था की देन हैं। इसलिए कवि बार-बार भीतर की ओर भागता

है जहाँ ज्ञान, वीर्य, ओज, प्रकाश, जहरीली आग, स्वर्ण स्फुलिंग, अंगारी धूप, किरण, सूर्य मिलते हैं. —

सच, हृदय रक्त के लाल थाल
में डूबा, गहरे डूबा है
जीवन विवेक
दुर्दान्त ज्ञान का मणि अशोक.

(भूरी-भूरी खाक धूल, पृ. 121)

यह जो जीवन विवेक है, आत्म सत्य है, इस को चरितार्थ करना, इसे कर्म में ढालना ही विचारों को आचार में परिणत करना है। मुक्तिबोध के आत्मसंघर्ष की यह एक मुख्य दिशा है। विचार और कर्म का द्वंद्व, रचनाकर्म और नागरिक कर्म। मुक्तिबोध के अपराध-बोध को इस संदर्भ में समझा जा सकता है और इसी संदर्भ में उसकी परम अभिव्यक्ति की बेचैनी भी समझी जा सकती है — अपने अनुभव सत्य को जन तक पहुंचाने की बेचैनी —

तब हम भी अपने अनुभव के
सारांशों को उन तक पहुंचाते हैं जिसमें
जिस् पहुंचाने के द्वारा हम, सब साथी मिल
दण्डक बन में से लंका का पथ खोज निकाल सकें।

(भूरी-भूरी खाक धूल, पृ. 171)

मुक्तिबोध के इस भीतरी भयानक मनः संघर्ष को बनाने वाली परिस्थितियाँ बाहर हैं। पूँजीवादी व्यवस्था और समाज में हैं, इसलिए उनके काव्य में जितना संत्रास है, उतना ही विद्रोह भी है। मुक्तिबोध की कविताओं में अंधेरे के अलावा जो दूसरा शब्द और रंग बहुतायत में प्रयुक्त हुआ है वह है — ''लाल''।

लाल-लाल चादरें
सिंदूरी झंडियाँ
सुनहरी पताकाएँ फरफरा रही हैं।
और आसमान में
कत्थई गेरुए धुएँ की बड़ी-बड़ी लहरें
तैरती हैं हवा में।

(चाँद का मुँह टेढ़ा है, पृ. 225-226)

घुसती है लाल-लाल मशाल अजीब सी,
अन्तराल-विवर के तम में
लाल-लाल कुहरा
कुहरे में, सामने, रक्तालोक-स्नात पुरुष एक
रहस्य साक्षात्

(चाँद का मुँह टेढ़ा है, पृ. 246-247)

धरती ने खिलाये हैं ज्वलंत लाल-लाल
नये-नये फूल कैसे लगते हैं आग भरे
जीवन-सुहाग-भरे।

(भूरी-भूरी खाक धूल, पृ. 218)

इसके अतिरिक्त लाल चिंता की रुधिर-धारा, किरणों के रक्त मणि, रक्तिम तितलियाँ, गेरूआ, ज्वाला, आभ्यंतर का अग्नि-सरोवर आदि कविताओं में प्रयुक्त शब्द ''अंधेरे'' के विरुद्ध अपनी आभा का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह आभा क्रांति की आशा और आकांक्षा की है —

भारतीय अंधेरी गहरी-गहरी गलियों में आजकल
सर्दी की भयानक काली-काली रातें हैं
व उनके किनारों पर
विद्रोह के जल रहे लाल-लाल
धधकते अंगार

(भूरी-भूरी खाक धूल, पृ. 187)

यह लाल रंग क्रांति का सूचक है। मुक्तिबोध ने यह अनुभव किया है कि क्रांति के द्वारा ही परिवर्तन लाया जा सकता है, राजनीतिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन।

**बोध प्रश्न 1**

क) मुक्तिबोध के दो काव्य संग्रह हैं — नाम लिखिये।

1) .....

2) .....

ख) मुक्तिबोध जब लेखन में प्रवृत्त हुए, उस समय हिंदी काव्य में कौन-कौन सी काव्य प्रवृत्तियाँ उभार पर थीं।

.....

.....

ग) मुक्तिबोध के अनुसार "जनता का साहित्य" का क्या अर्थ है? संक्षेप में बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

घ) वर्ग विभाजित समाज में मुक्तिबोध बुद्धिजीवी वर्ग का क्या कर्त्तव्य मानते हैं? संक्षेप में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

च) मुक्तिबोध पूँजीवादी व्यवस्था का विरोध कैसे करते हैं? संक्षेप में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

छ) मुक्तिबोध के काव्य में दहशत, आतंक, भय और सन्नाटे का गहरा वातावरण हर समय छाया रहता है — संक्षेप में बताइए — यह वातावरण किस कथ्य की सृष्टि करता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ज) मुक्तिबोध के काव्य में घुग्घु, सियार, कुत्ते, बिल्ली, पिशाच किस के प्रतीक बन कर आते हैं?

.....

.....

झ) मुक्तिबोध एक ओर अंधेरा और अंधेरे से मिलते-जुलते शब्दों का तथा दूसरी ओर लाल तथा इससे संबंधित शब्दों का बहुत प्रयोग करते हैं। संक्षेप में बताइये यह अंधेरा और लाल रंग मुक्तिबोध के काव्य में किस बात की ओर संकेत करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

## 29.5 संरचना शिल्प

मुक्तिबोध कथ्य के आत्म संघर्ष के समानांतर ही अभिव्यक्ति संघर्ष से भी जूझते रहे हैं। पारंपरिक काव्य, काव्य शैली, बिंब, रूपक, काव्य भाषा को छोड़कर उन्होंने अपने लिये जटिल किंतु नया, अनगढ़ रास्ता चुना, अपनी सामाजिक चेतना और अंतः बाह्य के संघर्ष को प्रामाणिक और ईमानदार बनाकर प्रस्तुत करने की प्रक्रिया में उन्होंने भाषा के आभिजात्य को तोड़ा, फैंटेसी का शिल्प अपनाया, बिंबों की एक नयी दुनिया से अर्थ को सारगर्भित बनाया और प्रतीकों को भी नया प्रयोग और अर्थ दिया। यहाँ हम मुक्तिबोध के शिल्प में काव्यरूप, काव्यभाषा, प्रतीक योजना और बिंब विधान का विश्लेषण करेंगे।

**काव्य रूप और शैली**

मुक्तिबोध की "कविताएँ बड़े परिश्रम से लिखी गयी कविताएँ हैं जैसे बढ़ई रंदे और बसूले से लकड़ी की छील-छाल करता है"। (विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, मुक्तिबोध, पृ. 87) नेमिचन्द्र जैन को लिखे पत्रों में मुक्तिबोध लिखते हैं — "आप विश्वास नहीं करेंगे, एक कविता को दुरुस्त करने के लिये छह घंटे लगते हैं।" एक दूसरे पत्र में — "कविता सुधारते नाक में दम आ गई है। कैसी विपत्ति मोल ले ली।" (आलोचना-6, पृ. 37) डायरी में मुक्तिबोध लिखते हैं — "यथार्थ के तत्व परस्पर गुंफित होते हैं, साथ ही पूरा यथार्थ गतिशील होता है। अभिव्यक्ति का विषय बन कर जो यथार्थ प्रस्तुत होता है वह भी ऐसा ही गतिशील है, और उसके तत्व भी परस्पर गुंफित हैं। यही कारण है कि मैं छोटी कविताएँ नहीं लिख पाता और जो छोटी होती हैं वे वस्तुतः छोटी न होकर अधूरी होती हैं।" (एक साहित्यिक की डायरी, पृ. 27)

मुक्तिबोध की लगभग कविताएँ लम्बी हैं और एक-एक कविता लिखने के लिये वे महीनों उस पर काम करते रहते थे। काव्य की जो अन्तर्वस्तु, कथ्य होता है, वो काव्य रूप के निर्धारण में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और दूसरी ओर काव्य रूप भी कथ्य को निर्धारित करता है। वास्तव में वस्तु एवं रूप का संबंध द्वंद्वात्मक होता है। फिर भी, यदि मुक्तिबोध अपने युग की भयंकर त्रासदी, दहशत, आतंक और व्यवस्था के शोषण और सत्ता की बर्बरता के साथ अपने भीतर के आत्मसंघर्ष की छटपटाहट को काव्य रूप में अभिव्यक्ति देना चाहते थे और यथार्थ को परस्पर गुंफित और गतिशील रूप में अनुभव करते थे तो उनका काव्य रूप लंबी कविता के रूप में ही सामने आ सकता था।

दूसरी बात जो मुक्तिबोध ने कही है — वह बात यह है कि यह परस्पर गुंफित और गतिशील यथार्थ अपने कलात्मक रूप में फैंटेसी का सहारा लिये बिना अभिव्यक्त नहीं हो सकता। फलतः उनकी कविताएँ फैंटेसी अथवा फंतासी में यथार्थ को पिरो कर चलती है। यह फंतासी प्रतीक धर्मी और बिंबधर्मी होती है। इसमें बिंबों की माला गुंथी रहती है। इन प्रतीकों और बिंबों को खोलना पड़ता है तब कविता समझ में आती है। मुक्तिबोध के प्रतीक और बिंब एक नयी भयानक, त्रासद दुनिया को ही खोल कर सामने रखते हैं। उन्होंने संस्थाओं के भ्रष्टाचार और सत्ताधारी वर्ग के आंतक को खण्डहरों, घुग्घुओं, उल्लुओं, बिल्लियों और जासूसों के जरिए उभारा है।

मुक्तिबोध की काव्य शैली नाट्यात्मक है, मानों कि वे फिल्म टेकनीक का इस्तेमाल करते हैं — जैसे फिल्मों में दृश्य बदलते हैं, वैसे ही मुक्तिबोध की कविता चित्रों की अनवरत लड़ी में गुंथी हुई प्रतीत होती है। एक के बाद एक चित्र आता रहता है। कभी-कभी वे संबोधन शैली का भी इस्तेमाल करते हैं, स्वयं बोलने लगते हैं, समझाने लगते हैं — शायद इसलिए भी कि कहीं बिंब, प्रतीक अबूझ न हो जाएँ। उनकी सबसे लंबी और महत्वपूर्ण कविता "अंधेरे में" इस नाट्य शैली या फिल्मी तकनीक का बेहतरीन उदाहरण है —

जिन्दगी के —
कमरों में अंधेरे
लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार
आवाज पैरों की देती है सुनायी
बार-बार, बार-बार,
वह नहीं दीखता — नहीं ही दीखता,
किंतु, वह रहा घूम
तिलिस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक
भीत-पार आती हुई पास से
गहन रहस्यमय अंधकार-ध्वनि सा
अस्तित्व जनाता
अनिवार कोई एक

(अंधेरे में)

**प्रतीक योजना**

आपने यह पहले भी पढ़ा है कि मुक्तिबोध के काव्य में दो शब्द बार-बार आते हैं — ''अंधेरा'' और ''लाल''। ''अंधेरा'' और अंधेरे से मिलते-जुलते शब्द जैसे स्याह, काला, श्याम, साँवला और ''लाल'' से मिलते-जुलते शब्द जैसे अग्नि, रुधिर, रक्तमणि, रक्तिम तितलियाँ आदि। वस्तुतः ''अंधेरा'' प्रतीक है व्यवस्था के आतंक, दमन, बर्बरता और शोषण का और लाल रंग प्रतीक है — क्रांति, परिवर्तन और खुशहाली का, अन्तर्मन की सच्चाईयों का, प्रकाश का और युद्धरत लोकजीवन का।

मनोविज्ञान के अनुसार मस्तिष्क में वस्तु जगत के दृश्यों के प्रतिबिंब बनते हैं। कवि इन प्रतिबिंबों को अपने संवेदनात्मक उद्देश्य के लिये सह-संयोजन द्वारा मूर्त रूप देता है। यह मूर्त रूप ही कवि के संवेदनात्मक उद्देश्य से जुड़ी हुई प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। उदाहरण के लिये मुक्तिबोध के एक प्रतीक ''चाँद'' को लीजिए। कवि के मस्तिष्क में ''चाँद'' के बारे में कई प्रतिबिम्ब चुने हुए हैं जो समाज, परंपरा, शिक्षा-दीक्षा, अनुभव द्वारा पोषित हैं। चाँद परंपरा से रूप का प्रतीक रहा है। रूप का संबंध चाँदी से है। और चाँदी का अर्थ है पूँजी। पूँजीवादी व्यवस्था ने जो पीड़ा कवि को दी, इसके कारणों को जानने-समझने के दौरान कवि की प्रतिबद्धता सामने आई। अतः चाँद का रुपये से संबंध होने के कारण काव्य की रचना प्रक्रिया में, यह पूँजीवादी उद्योगवादी व्यवस्था का प्रतीक बन गया। मुक्तिबोध ने इसी दृष्टि से अपने काव्य में प्रतीकों का प्रयोग किया है। इसलिए उनके प्रतीक मौलिक और नये होते हुए भी थोपे हुए नहीं लगते।

मुक्तिबोध के प्रतीकों को मुख्य रूप से दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। स्थितिपरक प्रतीक जो अपना अर्थ विभिन्न स्थितियों या संदर्भों में देते चलते हैं। संदर्भों में ही उनके प्रत्येक अर्थ की छाया में अन्य अर्थ झलकतें हैं। और आत्म चैतन्य के प्रकाश के प्रतीक जिन्हें अन्तर्निहित या आवर्ती प्रतीक कहा जा सकता है।

बरगद मुक्तिबोध का प्रिय प्रतीक है, जिसकी आवृत्ति कई कविताओं में हुई है। कहीं तो वह ह्रासशील पूँजीवादी व्यवस्था से उत्पन्न सांस्कृतिक शून्यता का साक्षात् कराने वाला प्रतीक है, कहीं जनमानस का आदर्शीकृत रूप है। कहीं वह मार्क्सवादी अक्षयवट बनता है।

''युगान्तरकारी, आस्थाओं का एक विशाल भव्य अक्षयवट'' इसी अक्षयवट या बरगद की छत के नीचे सर्वहारा वर्ग को आश्रय मिल सकता है, अन्यत्र नहीं। ''वन तुलसी'' पुरानी रुढ़िवादी परंपरा की प्रतीक है तथा 'बबूल' सर्वहारा वर्ग का।

अन्य प्रतीकों में ''ब्रह्मराक्षस'', निष्क्रिय, निस्संग बुद्धिजीवी का प्रतीक है, जो निष्क्रिय रह कर समाज के रोगों की छानबीन तो करता रहा, आक्रोश दिखाता रहा — किंतु कुछ क्रियान्वित नहीं कर पाया। ''अंधेरे में'' इसी ब्रह्मराक्षस की भर्त्सना ''सिरफिराजन'' करता है — ''ओ मेरे आदर्शवादी मन/ओ मेरे सिद्धांतवादी मन/अब तक क्या किया/जीवन क्या जीया?''

''बरगद'' की तरह ही ''टीला'' कवि का अन्य महत्वपूर्ण प्रतीक है, जो मध्यमवर्ग का परिचायक है। अंधेरी घाटियों के गोल टीलों, घने पेड़ों में कहीं खो गया है। यह अंधेरी घाटियाँ-टीले अज्ञान, अंधकार की घाटियों में रहने वाले मध्यमवर्ग के लोग हैं। जो वर्ग चेतना के अभाव में जड़ता के शिकार बने हुए हैं। इसी कारण वे समाजवादी समाज के मार्क्सवादी दर्शन के सत्य को स्वीकारते नहीं हैं किंतु वर्गापसरण होने पर ये टीले निम्न वर्ग से मिलकर आत्मपरिचय पार जाते हैं।

निष्कर्षतः मुक्तिबोध के प्रतीक बड़े सधे हुए हैं। और उनके विचार-चिंतन के ताप में तपकर निकले हैं।

**बिंब तथा आद्य बिंब**

मुक्तिबोध की कविता बिंबधर्मी है, वे बिंबों का बहुत इस्तेमाल करते हैं। उनकी कविता में बिंब कथ्य को प्रखरता प्रदान करते हैं और भाषा को कलात्मक भी बनाते हैं। उदाहरण के लिये ''अंधेरे में'' कविता का यह प्रारंभिक अंश देखिये —

जिन्दगी के .....
कमरों में अंधेरे
लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार,
आवाज़ पैरों की देती है सुनाई
बार-बार ..... बार-बार,
वह नहीं दीखता .... नहीं ही दीखता
किंतु, वह रहा घूम
तिलिस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक,
भीत-पार आती हुई पास से,
गहन रहस्यमय अंधकार-ध्वनि सा
अस्तित्व जनाता
अनिवार कोई एक

यह वैचारिक बिंब रहस्यमयता और आतंक की ही सृष्टि नहीं करता बल्कि पाठक को मन के भीतर की हलचल से भी परिचित कराता है और संकेत देता है कि कविता मन के भीतर की उथल-पुथल से प्रारंभ हो रही है।

मुक्तिबोध के बिंबों को प्राकृतिक बिंब, मानव संसार के बिंब, विशिष्ट वैचारिक बिंबों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

**प्राकृतिक बिंब :** मुक्तिबोध प्रकृति से चाँद, सूरज, बरगद, अक्षयवट, बाबड़ी आदि बिंब चुनते हैं किंतु ये बिंब प्रकृति का चित्र नहीं प्रस्तुत करते बल्कि बृहत्तर सामाजिक और मानवीय सरोवरों से जुड़ कर आते हैं। इस अर्थ में मुक्तिबोध के प्राकृतिक बिंब अज्ञेय के प्राकृतिक बिंबों से भिन्न हैं। अज्ञेय के प्राकृतिक बिंब केवल प्रकृति का ही वर्णन या चित्रण करते हैं। चाँद मुक्तिबोध के यहाँ पूँजीवादी व्यवस्था का प्रतीक है, बरगद — कभी मार्क्सवादी विचारधारा का और कभी अक्षयवट का, बावड़ी अन्तर्मन का।

**मानव संसार के बिंब :** सबसे अधिक बिंब मुक्तिबोध के यहाँ मानव संसार के हैं —

"सामने मेरे
सर्दी में बोरे को ओढ़ कर
कोई एक अपने
हाथ-पैर समेटे
काँप रहा — हिल रहा — वह मर जाएगा।"

(चाँद का मुँह टेढ़ा है, पृ. 11)

तिलक, गाँधी, टॉलस्टाय, शिशु का वे बिंबों में प्रयोग करते हैं। सुअर, घुग्घु, सियार, बिल्ली, उल्लू, कुत्ते, जासूस आदि भी उनके बिंब विधान में शामिल हैं।

**विशिष्ट वैचारिक बिंब :** मुक्तिबोध पारंपरिक बिंबों को अपने काव्य में एक नये वैचारिक अर्थ से पोषित करते हैं। ऐसे बिंबों में हम ब्रह्मराक्षस, ओरांग-ओटांग को ले सकते हैं।

इसके अलावा मुक्तिबोध के बिंबों का स्थिर बिंब, गतिशील बिंब, ध्वनि बिंब आदि के आधार पर भी वर्गीकरण किया जा सकता है।

**आद्य बिंब :** आद्य बिंब आर्केटाईपल बिंब हैं। ये ऐसे बिंब होते हैं जो जातीय समूह के मन में युगों से स्थानांतरित होते रहते हैं और सब के लिये इनका एक ही अर्थ होता है। कार्ल युग ने मन की चेतन, अचेतन क्रियाओं का अध्ययन करते हुए बताया है कि हमारे मन के चेतन और अचेतन दो भाग होते हैं। अचेतन के भी दो स्तर होते हैं — व्यक्तिगत तथा सामूहिक। सामूहिक अचेतन में जातीय इच्छाएँ, स्वप्न, रूप सुरक्षित रहते हैं। सामूहिक अचेतन को समूह मन भी कहते हैं। समूह मन की यही इच्छाएँ, स्वप्न, आकांक्षाएँ आद्य बिंबों, प्रतीकों के द्वारा कला में अभिव्यक्त होती हैं। मुक्तिबोध ने अपने काव्य में अचेतन के आद्य बिंबों का सफल प्रयोग किया है। मुक्तिबोध द्वारा प्रयुक्त आद्य बिंबों को सुविधा के लिये निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है — जल के आद्य बिंब, अंधकार के आद्य बिंब, धरातल के आद्य बिंब, धरा के आद्य बिंब तथा अन्य आद्य बिंब।

**जल के आद्य बिंब :** जल अचेतन का एक सामान्य प्रतीक है। प्राचीन भारतीय साहित्य तथा ग्रीक साहित्य में भी यह अचेतन के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त होता रहा है। जल के आद्य बिंब मुक्तिबोध के काव्य में प्रचुरता से इस्तेमाल हुए हैं। "ब्रह्मराक्षस", "एक स्वप्न कथा", "चकमक की चिनगारियाँ", "अंधेरे में", कविताओं में इन्हें देखा जा सकता है। "ब्रह्मराक्षस" कविता में बावड़ी व पुराना जल इसी अचेतन के प्रतीक हैं।

**अंधकार के आद्य बिंब :** युंग ने रात्रि और अंधकार को अचेतन के प्रतीक माना है। मुक्तिबोध ने स्वतंत्र रूप से अंधेरे के चित्र बहुत कम खींचे हैं। अंधेरे को विभिन्न अर्थों में कवि ने प्रयोग किया है। फिर भी "चम्बल की घाटी में", "अंधेरे में", "चकमक की चिनगारियाँ", "चाँद का मुँह टेढ़ा है" आदि कविताओं में अंधेरा और रात्रि अचेतन के अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं —

अंधेरे में रहता था अब तक छिपा हुआ।
जो निज-संदर्भ,
जो निज-संबंध
जो गुप्त प्रक्रिया गहन निजात्मक
वह देह धर कर
दस्यु रूप
बैठ गयी उर पर

(चम्बल की घाटी में)

यहाँ अंधकार व्यक्तिगत अवचेतन को प्रतीकित करता है।

**धरांतर के आद्य बिंब:** मुक्तिबोध के काव्य में धरांतर के आद्य बिंब भी बहुत हैं। इनमें कवि को "गुहा" के बिंब अत्यधिक प्रिय हैं। "गुहा" भी अचेतन का ही प्रतीक है। इस दृष्टि से "ओ काव्यात्मक फणिधर", "मेरे सहचर मित्र", "अंधेरे में", "चम्बल की घाटी में" आदि कविताएँ महत्वपूर्ण हैं। "चाँद का मुँह टेढ़ा है" में यह बिंब —

क्रोंच की गुहाओं का मुँह खोले
शक्ति के पहाड़ दहाड़ते हैं

यहाँ पर कवि ने जिस शक्ति का बिंब प्रस्तुत किया है उसका स्रोत अचेतन चित्त ही है। इस बिंब की तुलना "अंधेरे में" के निम्नलिखित बिंब से की जा सकती है —

वृक्षों के अंधेरे में छिपी हुई किसी एक
तिलिस्मी खोह का शिला द्वारा
खुलता है धड़ से।

दोनों बिंबों में गुहा द्वार अकस्मात खुलता है। कवि यह व्यंजना करना चाहता है कि अंतर गुहा का द्वार आयास नहीं अनायास खुलता है। कारण, अचेतन पूर्णतया स्वायत्त है।

**धरा के आद्य बिंब :** मुक्तिबोध के काव्य में धरा के आद्य बिंब भी पर्याप्त हैं। इनमें धरती, नगर, गाँव, वृक्ष, जंगल, झाड़ियाँ आदि विशेष महत्व के हैं। धरती अचेतन का प्रतीक है। "ओ काव्यात्मक फणिधर" में गाँव अचेतन के सृजनात्मक पक्ष का प्रतीक बना है।

निष्कर्षतया मुक्तिबोध के काव्य में अचेतन के आद्य बिंब विपुल संख्या में हैं। समुद्र, बावड़ी, तालाब, रात्रि, अंधकार, गुहा, विवर, घाटी, झाड़ियाँ, खड्ड, खाई, कुआँ, ज्वालामुखी, धरती, नगर, गाँव, वृक्ष, प्रकोष्ठ आदि के माध्यम से कवि ने मानवीय व्यक्तित्व के उस अंधकार पक्ष की अभिव्यक्ति की है, जिसकी यात्रा किये बगैर कोई भी सृजनात्मक प्रतिभा कृतकार्य नहीं हो सकती।

**काव्य-भाषा**

मुक्तिबोध की काव्य-भाषा सरल नहीं है, जटिल है। इस जटिलता के कारण उन्हें समझने में पाठकों आलोचकों को कठिनाई भी होती रही है। वस्तुतः मुक्तिबोध की काव्य-भाषा पारंपरिक काव्य-भाषा के सपनों को तोड़ती है, उसमें कोमल, दृढ़, मृदु, तद्भव शब्दावली नहीं है — उसे आप तब तक नहीं छू सकते, जब तक आप मुक्तिबोध के मानसिक संसार, उसके अभिप्रेत के बारे में कोई संकेत न हासिल कर लें। मुक्तिबोध का कथ्य एक ही रहा है — व्यवस्था के शोषण किले में घुस कर बर्बरता, आतंक, भयानक त्रासदियों को नंगा करना, जो मानवीय संसार को दहशत का आदी बना कर उसे नपुंसक और खोखला बना रही हैं। इस यथार्थ को अभिव्यक्ति देने के लिये उन्होंने जिस काव्य भाषा को अपनाया उसमें, फंतासी, प्रतीक, बिंबों की भरमार है। तत्सम शब्दों की विपुल वर्षा है। एक स्तर पर तो यह भाषा गद्यात्मक लगती है किंतु कविता की आंतरिक लय उसे पठनीय बना कर ग्राह्य बनाती है। उनकी भाषा कितनी भी जटिल क्यों न हो — वह जीवनानुभवों से जुड़ी हुई भाषा है।

सृजन के स्तर पर मुक्तिबोध ने हिंदी काव्य को असंख्य नये शब्द दिये हैं। मुक्तिबोध की कविता में आते ही शब्दों का पारंपरिक अर्थ टूट जाता है और वे नये अर्थों के प्रकाश से चमकने लगते हैं। जैसे 'ओरांग ओटांग" या 'ब्रह्मराक्षस'।

मुक्तिबोध की काव्य भाषा में अंग्रेजी, उर्दू, मराठी, तत्सम, तद्भव शब्दों का बहुत प्रयोग किया है। जैसे —

अंग्रेजी शब्द — स्क्रीनिंग, ड्रैस, टैंक, आर्टिलरी, थियोरम, इलेक्ट्रान, किंग्जवे।

उर्द्व शब्द — जमाना, मुफलिसी, अजीब, वारदात, जिस्म, सुलतान, शनाख्त।

मराठी शब्द — नक्षीदार, नक्षे, बास, हकाल दिया, गजर, कंदील, पूर।

तत्सम शब्द — ऊष्मश्वस, आगमिष्यत, प्रभा, जातवेदस, प्राक्तन, आत्मवेतस्, उद्भ्रांत, रूधिर-स्नात, मंत्रोच्चार, प्रकोष्ठ।

तद्भव शब्द — भीत, कंडा,.रिवाड़, दलिदर, अगासी, धुधलवे, खूँटा आदि।

इसके अतिरिक्त मुक्तिबोध की काव्य-भाषा में मुहावरों का भी प्रयोग हुआ है —

अपना गणित करना, मछलियाँ फसाना, दिल की बस्ती
उजाड़ना, मूठ मारना, केंचुली उतारना, ईसा के पंख
झड़ना, नक्शा रंग आदि।

निष्कर्षतया मुक्तिबोध की भाषा अनगढ़, बेडोल अवश्य लगती है किन्तु प्राणवता, तेवर और विशिष्ट अर्थवता उसे व्यंजक और विशिष्ट बनाते हैं। ललित न होने के कारण वह भयानक यथार्थ को अभिव्यक्ति देने में सक्षम हुई है। मुक्तिबोध वास्तव में भाषा चुनते नहीं, गढ़ते हैं, इसलिए भाषा की यह खोज मुक्तिबोध के लिए वस्तुतः जीवन की खोज है।

**बोध प्रश्न 2**

1 मुक्तिबोध ने लम्बी कविताएँ ही लिखी हैं। वे छोटी कविताएँ लिख पाने में असमर्थता अनुभव करते थे। संक्षेप में टिप्पणी कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2 मुक्तिबोध ने अपनी कविताओं में प्रमुख रूप से किस शैली का इस्तेमाल किया है?

.....

.....

3 "ब्रह्मराक्षस" और "बरगद" मुक्तिबोध की कविताओं में किनके प्रतीक बन कर आए हैं? संक्षेप में बताइये।

.....

.....

.....

.....

4 मुक्तिबोध के बिंबों और आद्य बिंबों को कौन-कौन सी श्रेणियों में बाँटा जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

5 आद्य बिंब का क्या अर्थ है?

.....

.....

.....

.....

6 मुक्तिबोध की काव्य-भाषा में किन-किन भाषाओं के शब्दों का बाहुल्य है?

.....

.....

## 29.6 काव्य पाठ एवं व्याख्या

यहाँ हम आपको पढ़ने के लिए मुक्तिबोध की दो कविताओं (अंधेर में तथा भूल गलती) के प्रारंभिक अंश दे रहे हैं। इनमें से कुछ पंक्तिओं की हम व्याख्या करके आपको व्याख्या करना भी सिखाएंगे। कुछ पंक्तियों की व्याख्या आप स्वयं करेंगे, जिसमें हम भी आपकी सहायता करेंगे —

**काव्य अंश**

**अंधेरे में**

जिन्दगी के ····
कमरों में अंधेरे
लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार,
आवाज पैरों की देती है सुनायी
बार-बार ···· बार-बार
वह नहीं दीखता ···· नहीं ही दीखता,
किंतु, वह रहा घूम
तिलिस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक,
भीत-पार आती हुई पास से,
गहन रहस्यमय अंधकार-ध्वनि सा
अस्तित्व जनाता
अनिवार कोई एक,
और, मेरे हृदय की धक-धक
पूछती है — वह कौन
सुनायी जो देता, पर नहीं देता दिखायी।

इतने में अकस्मात् गिरते हैं भीत से
फूले हुए पलस्तर
खिरती हैं चूने भरी रेत

खिसकती हैं पपड़ियाँ इस तरह —
खुद-ब-खुद
कोई बड़ा चेहरा बन जाता है,
स्वयमपि
मुख बन जाता है दिवाल पर,
नुकीली नाक और
भव्य ललाट है,
दृढ़ हनु,
कोई अनजानी अन-पहचानी आकृति।
कौन वह दिखायी जो देता, पर
नहीं जाना जाता ।।
कौन मनु?

(ये पंक्तियाँ कविता के कथ्य की ओर संकेत करती हैं। इन पंक्तियों में जिस आत्मसंघर्ष और अन्तर्द्वंद्व की स्थिति निर्मित हुई है वह आगे चलकर और गहरी होती है। दूसरी ओर फूली हुई पपड़ियाँ, चूने भरी रेत और अंधेरे से जिस भयानक वातावरण का निर्माण हुआ है — वह भयानकता आगे चल कर अर्थ ग्रहण करती है।)

**भूल गलती**

भूल गलती
आज बैठी है ज़िरहबख्तर पहन कर
तख्त पर दिल के,
चमकते हैं खड़े हथियार उसके दूर तक,
आँखें चिलकती हैं नुकीले तेज पत्थर-सी
खड़ी हैं सिर झुकाये
सब कतारें
बेजुबाँ बेबस सलाम में,
अनगिनत खम्भों व मेहराबों — थमे।
दरबारे आम में।
सामने
बेचैन घावों की अजब तिरछी लकीरों से कहा
चेहरा
कि किस पर काँप
दिल की भाफ उठती है ···
पहने हथकड़ी वह एक ऊँचा कद,
समूचे ज़िस्म पर लत्तर
झलकते लाल लम्बे दाग़
बहते खून के।
वह कैद कर लाया गया ईमान ···
सुलतानी निगाहों में निगाहें डालता
बेखौफ नीली बिजलियों को फेंकता
खामोश!!
सब खामोश
मनसबदार,
शायर और सूफी,
अलग़ज़ाली, इब्ने सिन्ना, अलबरूनी,
आलिमो फ़ाज़िल सिपहसालार, सब सरदार
हैं खामोश!!

(मुक्तिबोध की प्रत्येक कविता में उनका आत्मसंघर्ष चलता है। वे मन के भीतर उतर कर समस्याओं के अन्तर्द्वंद्वों को उद्घाटित करते हैं। ''भूल गलती'' कविता इसी तरह के आत्मसंघर्ष की एक अभिव्यक्ति है। व्यक्ति जीवन में स्वार्थ वश तरह-तरह की भूल गलतियाँ करता चलता है और उन भूल-गलतियों को सत्यापित करने के लिये तरह-तरह के बहाने गढ़ लेता है और अपने आप को समझाने के प्रयास करता रहता है। इसके लिये वह तरह-तरह के झूठ बोलता

है और गलतियों को बढ़ावा देता रहता है। इस कविता में भूल-गलती का ज़िरह बख्तर पहनना, इसी तरह के झूठों से घिरे होकर सुरक्षित होने का भ्रम पालना है। उसके हथियार यही झूठ हैं।

किंतु दूसरी ओर व्यक्ति का आत्मचेतम् मन या आत्मा या चेतना, जो इन झूठों, भूलों और गलतियों को स्वीकार नहीं कर पाती — और इनसे द्वंद्व की स्थिति में रहती है, अत्यधिक दब जाने पर छिलती रहती है इसीलिये इस कविता में उसे खून से लथपथ बताया गया है। मन या चेतना की आवाज स्वार्थ के कारण व्यक्ति नहीं सनता या उसे अनसुनी करता रहता है।

कवि या लेखक या सर्जक का कर्तव्य होता है कि वे सच बोले किंतु स्वार्थ, और झूठे मोह, पदोन्नति, यश-नाम की आकांक्षा के कारण वे भी खामोश रहते हैं और ईमान की बात नहीं करते।)

**उद्धरण :** उद्धरण के रूप में हम यहाँ "अंधेरे में" कविता का वह पूरा अंश ले रहे हैं, जिसे अभी आपने पढ़ा है।

जिन्दगी के .....
.....
कौन मनु?

**प्रसंग :** यह उद्धरित अंश गजानन माधव मुक्तिबोध की कविता "अंधेरे में" से लिया गया है। यह कविता सबसे पहले मुक्तिबोध के प्रथम काव्य संग्रह "चाँद का मुँह टेढ़ा है" में प्रकाशित हुई थी। यह काव्य संग्रह तब प्रकाशित हुआ था, जब मुक्तिबोध दुर्भाग्य से मृत्युशय्या पर थे। "अंधेरे में" कविता मुक्तिबोध की सबसे लम्बी कविता है। इसमें लगभग पंद्रह सौ पंक्तियाँ हैं। यह मुक्तिबोध की अंतिम कविता भी कही जाती है।

**संदर्भ :** मुक्तिबोध के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने अपने सारे काव्य में एक ही कविता लिखी है और उनकी समस्त कविताएँ उस एक कविता के ही भिन्न-भिन्न खंड हैं। और "अंधेरे में" उस कविता का चरम बिन्दु है। फिर भी "अंधेरे में" कविता मुक्तिबोध की समस्त कविताओं में एक विशिष्ट कविता है। यहाँ व्याख्या के लिए जो अंश हमने लिया है, वह कविता का प्रारंभिक अंश है। कविता एक रहस्यमय वातारण का निर्माण करती हुई प्रारंभ होती है।

**व्याख्या :** कवि कहता है कि जिंदगी के अंधेरे कमरों में कोई लगातार चक्कर लगाता है। जिसके पैरों की आवाज बार-बार सुनायी पड़ती है किंतु वह दिखायी नहीं पड़ता है। वह किसी तिलिस्मी खोह में गिरफ्तार घूम रहा है। दीवार के दूसरी ओर से आती हुई गहन रहस्यमय अंधकार की ध्वनि उसके होने का प्रमाण देती है। वह अनिवार्य है अर्थात् उसे रोक पाना असंभव है।

कवि आगे कहता है कि मेरे दिल की धड़कन पूछती है कि वह कौन है? जिसके होने का एहसास उसके चलने और घूमने से हो रहा है, किंतु जो दिखाई नहीं दे रहा। इसके बाद अचानक दीवार का फूला हुआ पलस्तर गिरने लगता है, चूने भरी रेत झड़ने लगती है और दीवार से पलस्तर की पपड़ियाँ इस तरह गिरती हैं कि दीवार पर एक चेहरा बन जाता है, जिसकी नुकीली नाक और भव्य ललाट है, दृढ़ हनु (ठोडी) है। कवि कहता है कि यह आकृति अनजानी और अपहचानी है। कवि उसे जानने की कोशिश करता है .... क्या वह मनु है?

मुक्तिबोध की अन्य कविताओं में भी इसी प्रकार का रहस्यमयी विराट पुरुष आता है। "मेरे सहचर मित्र" में —

घुसती है लाल-लाल मशाल अजीब-सी
अंतराल विवरतम में
लाल-लाल कुहरा
कुहरे में, सामने, रक्तालोक-स्नात पुरुष एक
रहस्य साक्षात्

"मुझे याद आते हैं" कविता में भी —

निहाई से उठती हुई लाल-लाल
अंगारी तारिकाएँ बरसती हैं
जिसके उजाले में कि
एक अति भव्य देह
प्रचंड पुरुष श्याम
मुझे दीख पड़ता है

"पता नहीं" कविता में यह रहस्य पुरुष —

होता है प्रकट एक
वह शक्ति पुरुष
जो दोनों हाथों आसमान थामता हुआ
आता समीप
अत्यंत निकट।

वास्तव में यह रहस्यमयी, विराट पुरुष जो मुक्तिबोध की कविताओं में अचानक प्रकट होता है, जो रूप बदल-बदल कर आता है — वह मुक्तिबोध की वो आत्माभिव्यक्ति है, जिसकी खोज वे एक ओर तो आत्मसंघर्ष में करते हैं, दूसरे — बाह्य परिस्थितियों में। मनोविज्ञान का सहारा ले कर कहें तो वस्तुतः यह विराटकाय पुरुष अचेतन का प्रतीक है, अचेतन अनायास ही प्रकट होता है, अचेतन जिसमें मनुष्य की सारी संभावनाएँ एक बंद गुफा में कैद की तरह सोयी हुई हैं। इसलिए अचेतन से जब कुछ इच्छाएँ, संभावनाएँ, आकांक्षाएँ चेतन में आती हैं, तो उनका कोई क्रम नहीं होता, कोई निश्चित आकार नहीं होता। इसीलिए मुक्तिबोध का यह काव्यनायक भी कभी विराट होता है, कभी आसमान को हाथों में उठाकर प्रकट होता है। और जब भी वह प्रकट होता है — तब या तो बिजलियाँ चमकती हैं, पेड़ टूटते हैं या पलस्तर झड़ते हैं। अचेतन उस दीवार को तोड़कर ही प्रकट हो सकता है जो उसे चेतन से अलग करती है।

यह उद्धरण जिस भयानक सन्नाटे और रहस्यमय वातावरण की सृष्टि करता है — उससे कवि पाठक को एक संकेत तो यह देता है — कि यहाँ मन के तीव्र अंतर्द्वंद्व की स्थिति चल रही है। जिन्दगी के कमरों में अंधेरे/लगता है चक्कर/कोई एक लगातार। दूसरे इससे भयावह कथ्य की ओर भी संकेत मिलता है जिसे कविता आगे उद्घाटित करती है।

**विशेष:**

- यह उद्धरण एक ऐसे वैचारिक बिंब से निर्मित है जिससे मन के अंतर्द्वंद्व और संघर्ष का पता चलता है।
- इसमें फिल्मी तकनीक का इस्तेमाल हुआ है जैसे फिल्म में चित्र आते हैं वैसे ही यहाँ एक भयानक फिल्म की चित्र गति बनती हुई दिखाई पड़ती है।
- अंधेरा मुक्तिबोध के यहाँ "अचेतन" के आद्य बिंब के रूप में प्रयुक्त हुआ है। यहाँ भी "अंधेरा" अचेतन का प्रतीक बना है।
- काव्य भाषा में ज़िंदगी, अंधेरा, अचानक, चूने भरी रेत और भीत की पपड़ियों का खिसकना एक भयानक वातावरण की सृष्टि करते हैं।

## 29.7 सारांश

इस इकाई में आपने नयी कविता की प्रगतिशील धारा के प्रमुख कवि गजानन माधव मुक्तिबोध के काव्य के बारे में पढ़ा। मुक्तिबोध गहरे अंतर्द्वंद्व और तीव्र सामाजिक अनुभूतियों के कवि हैं। मुक्तिबोध मानते हैं कि यथार्थ एक स्तरीय नहीं, बहुस्तरीय होता है और गतिशील होता है। इस यथार्थ को अभिव्यक्त करने के लिये मुक्तिबोध ने फंतासी का इस्तेमाल किया है इसलिये उनकी कविताएँ लंबी कविताएँ हैं।

मुक्तिबोध के काव्य की अन्तर्वस्तु गहरी और व्यापक है। उन्होंने पूँजीवादी व्यवस्था के शोषण, बर्बरता और मनुष्य की मानसिकता को कुंद करते जाने के तरीकों का अपने काव्य में पर्दाफाश किया है। मुक्तिबोध का अभिव्यक्ति का आत्मसंघर्ष उनकी कविताओं में हर जगह मौजूद है। वे समाज में गली-सड़ी पूँजीवादी व्यवस्था के परिवर्तन के पक्षधर हैं।

मुक्तिबोध की काव्य भाषा सरल नहीं है। उसमें कठिन तत्सम शब्दों, अंग्रेजी-उर्दू के बहुत शब्द हैं। उनकी काव्य-भाषा नये प्रतीकों, बिंबों और आद्य बिंबों से गुंथी हुई है। नाट्यात्मक शैली उनकी काव्य शैली की एक प्रमुख विशेषता है।

निष्कर्षतः मुक्तिबोध का काव्य अपने समय के इतिहास के प्रश्नों को कविता में ढालने का प्रयास करता है।

## 29.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी (सं.) : *मुक्तिबोध*, ज्ञान भारती प्रकाशन, नई दिल्ली।

डॉ. लक्ष्मणदत्त गौतम (सं.) : *गजानन माधव मुक्तिबोध*, विद्यार्थी प्रकाशन, नई दिल्ली।

## 29.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

क) 1) "चाँद का मुँह टेढ़ा है", 2) "भूरी-भूरी धूल"।

ख) प्रगतिवादी और प्रयोगवादी प्रवृत्तियाँ।

ग) मुक्तिबोध के अनुसार "जनता का साहित्य" वह है जो जनता के जीवन मूल्यों को, जनता के जीवनादर्शों को प्रतिष्ठापित करता हो, उसे अपने मुक्तिपथ पर अग्रसर करता हो। अर्थात् जनता का साहित्य वह है जो जनता के लिये हो — चाहे वो अपनी अशिक्षित दशा के कारण उसे न समझ सके, किंतु यह उसी की भलाई के लिये कार्य करता हो।

घ) वर्ग-विभाजित समाज में बुद्धिजीवी का कर्त्तव्य है कि सर्वहारा का वह दिशा-निर्देश करके उसे परिवर्तन के लिये तैयार करे।

च) मुक्तिबोध पूँजीवादी व्यवस्था का विरोध, इस व्यवस्था द्वारा सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्तर पर किए जा रहे अमानुषिक शोषण, अत्याचार, आतंक और सत्ता की बर्बरता का पर्दाफाश करके करते हैं।

छ) यह वातावरण पूँजीवादी व्यवस्था द्वारा निर्मित आतंक, शोषण और जनता की मानसिकता को नपुंसक बनाते चले जाने के कथ्य को बताता है।

ज) मध्यवर्गीय सुविधाभोगी बुद्धिजीवी वर्ग के।

झ) अंधेरा — शोषण, आतंक, भ्रष्टाचार और [illegible] का प्रतीक है और लाल — परिवर्तन का।

**बोध प्रश्न 2**

1 मुक्तिबोध का मानना था कि यथार्थ के तत्व परस्पर गुंफित होते हैं, साथ ही पूरा यथार्थ गतिशील होता है। अभिव्यक्ति का विषय बन कर जो यथार्थ प्रस्तुत होता है वह भी ऐसा ही गतिशील है, और उसके तत्व भी परस्पर गुंफित हैं। यही कारण है कि वे छोटी कविताएँ नहीं लिख पाते थे।

2 नाट्यात्मक शैली

'ब्रह्मराक्षस' निष्क्रिय, निस्संग बुद्धिजीवी का प्रतीक है जो निष्क्रिय रह कर समाज के रोगों की छानबीन तो करता है किंतु कुछ कर नहीं पाता। 'बरगद' मुक्तिबोध की कविताओं में भिन्न-भिन्न अर्थों में प्रतीक बना है। कहीं वह ह्रासशील पूँजीवादी व्यवस्था से उत्पन्न सांस्कृतिक शून्यता का साक्षात् कराने वाला प्रतीक है, कहीं जनमानस का आदर्शीकृत रूप है और कहीं मार्क्सवादी दर्शन का।

4 मुक्तिबोध द्वारा प्रयुक्त बिंबों को प्रमुख रूप से दो श्रेणियों — बिंब तथा आद्य बिंब में बाँटा जा सकता है। बिंब को प्राकृतिक बिंब, मानव संसार के बिंब तथा विशिष्ट वैचारिक बिंबों में वर्गीकृत किया जा सकता है। और आद्य बिंबों को जल, अंधकार, धरातंर, धरा के आद्य बिंबों में।

5 ये ऐसे बिंब होते हैं जो जातीय समूह के मन में युगों से स्थानांतरित होते रहते हैं और सबके लिये इनका एक ही अर्थ होता है।

6 संस्कृत के तत्सम् शब्द, अंग्रेजी शब्द, मराठी और उर्दू के शब्द।

# इकाई 30 भवानी प्रसाद मिश्र

## इकाई की रूपरेखा


30.0 उद्देश्य
30.1 प्रस्तावना
30.2 कवि परिचय
  30.2.1 जीवन-परिचय
  30.2.2 रचनाकार-व्यक्तित्व
  30.2.3 कृतियाँ
30.3 काव्य संवेदना
  30.3.1 काव्यानुभूति
  30.3.2 कविता की मूल्य दृष्टि
  30.3.3 मानव और प्रकृति
  30.3.4 जन जीवन के संघर्षों की वाणी
  30.3.5 विसंगति और विडम्बना
  30.3.6 जीवन दर्शन
30.4 काव्य-शिल्प
  30.4.1 काव्य-रूप
  30.4.2 काव्य-भाषा और सर्जनात्मकता
  30.4.3 काव्य प्रतीक और काव्य बिंब
  30.4.4 लय और छंद
30.5 काव्य वाचन और संदर्भ सहित व्याख्या
30.6 मूल्यांकन
30.7 विचार संदर्भ और शब्दावली
30.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें
30.9 बोध प्रश्नों के उत्तर


## 30.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- छायावादोत्तर कविता की पृष्ठभूमि में भवानीप्रसाद मिश्र की काव्य संवेदना से साक्षात्कार करा सकेंगे,
- कवि-परिचय, रचनाकार-व्यक्तित्व के बुनियादी सरोकारों से परिचित होने के साथ उनकी कृतियों के विषय में बता सकेंगे,
- कवि की काव्यानुभूति की बनावट में गांधी विचार-दर्शन की भूमिका से परिचित करा सकेंगे,
- नयी कविता के अनास्थावादी तेवर से अलग हटकर आस्थावादी मूल्यों की खुली वकालत के कारणों को बता सकेंगे,
- भवानी प्रसाद मिश्र के काव्य-स्वभाव, काव्य-प्रेरणा, काव्य-दृष्टि और उद्देश्य का परिचय दे सकेंगे,
- कवि की अभिव्यक्ति-सम्पदा के सहज-सौन्दर्य की मार्मिकता से आत्मीय संवाद कर सकेंगे।

## 30.1 प्रस्तावना

कवि-जीवन के आरंभ से ही भवानी प्रसाद मिश्र छायावादी कविता की मूल दृष्टि और काव्य-शिल्प के मुहावरे के प्रति विद्रोही बनकर काव्य-सर्जना में प्रवृत्त हुए। उन्होंने अपनी कविता की स्वतंत्र राह स्वयं निर्मित की और किसी भी तरह की देशी-विदेशी काव्य प्रवृत्तियों के अनुकरण से दूर रहे। उनके कवि-मन का निर्माण वाल्मीकि-कालिदास, कबीर और सूर, भारतेन्दु और पं. रामनरेश त्रिपाठी की स्वच्छन्दता प्रिय दृष्टि ने किया। राष्ट्रीय जागरण ने उनकी सर्जनात्मकता में देश-प्रेम के संस्कारों को बलिष्ठ बनाया और मध्य प्रदेश की प्रकृति ने उनमें नया अनुराग पैदा किया। वे एक प्रकार से नर्मदा की तप-त्याग-धारा के परशुराम तेज वाले सन्त-कवि हैं। इस आधुनिक संत कवि को सत्य कहने और लिखने में ही जीवन की सार्थकता दिखाई देती है। वे किसी भी साहित्यिकवाद के भीतर बंधकर नहीं लिखते। दरअसल, पराधीनता उन्हें किसी तरह की स्वीकार न थी — न वाद की, न अंग्रेज की, न परायी भाषा की, न अभिव्यक्ति की, न पद-सत्ता की। वे सदैव स्थापित व्यवस्था के विरोध में रहे। दलितों-उपेक्षितों, दुर्भाग्य के मारे ग्रामीण बच्चों के लिए उन्होंने सदैव संघर्ष किया। फलस्वरूप उनकी कविता आत्माभिव्यक्ति के भीतर आत्मदान और आत्मप्रसार की कविता है। कहना न होगा उनमें इकबाल और निराला दोनों की अनुगूंज सुनाई देती है।